# आराधना पाठ

**(पं. द्यानतरायजी कृत)**

मैं देव नित अरहंत चाहूँ, सिद्ध का सुमिरन करौं।
मैं सूर गुरु मुनि तीन पद ये, साधुपद हिरदय धरौं।।
मैं धर्म करुणामयी चाहूँ, जहाँ हिंसा रंच ना।
मैं शास्त्र ज्ञान विराग चाहूँ, जासु में परपंच ना।।१।।
चौबीस श्री जिनदेव चाहूँ, और देव न मन बसैं।
जिन बीस क्षेत्र विदेह चाहूँ, वंदितैं पातक नसैं।।
गिरनार शिखर समेद चाहूँ, चम्पापुर पावापुरी।
कैलाश श्री जिनधाम चाहूँ, भजत भाजैं भ्रम जुरी।।२।।
नव तत्त्व का सरधान चाहूँ, और तत्त्व न मन धरौं।
षट् द्रव्य गुण परजाय चाहूँ, ठीक तासों भय हरों।।
पूजा परम जिनराज चाहूँ, और देव नहीं कदा।
तिहुँकाल की मैं जाप चाहूँ, पाप नहिं लागे कदा।।३।।
सम्यक्त्व दर्शन ज्ञान चारित, सदा चाहूँ भाव सों।
दशलक्षणी मैं धर्म चाहूँ, महा हरख उछाव सों।।
सोलह जु कारण दुख निवारण, सदा चाहूँ प्रीति सों।
मैं नित अठाई पर्व चाहूँ, महामंगल रीति सों।।४।।
मैं वेद चारों सदा चाहूँ, आदि अन्त निवाह सों।
पाये धरम के चार चाहूँ, अधिक चित्त उछाह सों।
मैं दान चारों सदा चाहूँ, भुवनवशि लाहो लहूँ।
आराधना मैं चार चाहूँ, अन्त में ये ही गहूँ।।५।।
भावना बारह जु भाऊँ, भाव निरमल होत हैं।
मैं व्रत जु बारह सदा चाहूँ, त्याग भाव उद्योत हैं।।
प्रतिमा दिगम्बर सदा चाहूँ, ध्यान आसन सोहना।
वसुकर्म तैं मैं छुटा चाहूँ, शिव लहूँ जहँ मोह ना।।६।।

मैं साधुजन को संग चाहूँ, प्रीति तिनही सों करौं।
मैं पर्व के उपवास चाहूँ, और आरँभ परिहरौं।।
इस दुखद पंचमकाल माहीं, सुल श्रावक मैं लह्यौ।
अरु महाव्रत धरि सकौं नाहीं, निबल तन मैंने गह्यौ।।७।।
आराधना उत्तम सदा चाहूँ, सुनो जिनराय जी।
तुम कृपानाथ अनाथ 'द्यानत' दया करना न्याय जी।।
वसुकर्म नाश विकास, ज्ञान प्रकाश मुझको दीजिये।
करि सुगति गमन समाधिमरन, सुभक्ति चरनन दीजिये।।८।।